शादी-ब्याह में बेजा ख़र्चों से कैसे बचें?

डॉ॰ फ़हीम अख़तर नदवी

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

"अल्लाह के नाम से जो अत्यन्त दयावान और बड़ा कृपाशील है।"

दुनिया का निज़ाम इनसाफ़ और सन्तुलन पर क़ायम है

इज़्ज़तवाले रब अल्लाह ने दुनिया में जो निज़ाम जारी और लागू किया है, उसकी बुनियाद इनसाफ़ और सन्तुलन पर है। क़ुरआन मजीद की 'सूरा-55 सूरा-रहमान में जब अल्लाह तआला ने इनसान की पैदाइश, उसके लिए क़ुरआन और बयान की तालीम, सूरज और चाँद के चक्कर लगने, तारों और पेड़-पौधों के सजदा करने और आसमान की बुलन्दी को बयान किया तो फ़रमाया, "उसने एक मीज़ान (तुला) रख दिया है, तो उस मीज़ान में कुछ भी बिगाड़ न करना और इंनसाफ़ के साथ तौलना, उसमें ज़रा भी डंडी मत मारना।"

यह अस्ल में इस बात का एलान था कि इस दुनिया का पूरा निज़ाम इनसाफ़ और सन्तुलन पर क़ायम है, और इस बुनियाद पर बाक़ी रहकर ही यह जारी रह सकता है, इस सन्तुलन और इनसाफ़ में ज़रा भी ख़लल अन्दाज़ी और बिगाड़ बरदाश्त के क़ाबिल नहीं है, अगर कहीं भी असन्तुलन पाया जाएगा तो पूरा निज़ाम प्रभावित होगा और इसके नुक़सान से इनसानी समाज महफ़ूज़ (सुरक्षित) नहीं रह सकेगा।

अगर सोच-विचार किया जाए तो हज़ारों-हज़ार बरस से लागू और ज़ारी इस कायनात (ब्रह्माण्ड) के निज़ाम में, एक अजीब और हैरान कर देनेवाला सन्तुलन काम कर रहा है। ये लाखों-करोड़ों सितारे, ये महीने और साल का मुस्तक़िल आना-जाना, ये आसमानों और कायनात में क़ुव्वत और कशिश का अमल, ये हवा और पानी का सन्तुलन, फिर दुनिया में लाखों जानदारों की ज़िन्दगी और उनकी ज़रूरतों। यह सारा निज़ाम और इन्तिज़ाम कितने

सन्तुलन के साथ जारी है। इसमें किसी पल कोई हलका-सा भी फ़र्क़ नहीं पड़ता। इस दुनिया के पैदा करनेवाले .ख़ुदा ने उनमें ऐसा सन्तुलन रख दिया है कि कोई किसी से नहीं टकराता, और अरबों बरस से यह कायनात पूरे सन्तुलन और तालमेल के साथ कार्यरत है।

इस हक़ीक़त के साथ एक दूसरी सच्चाई भी सोच-विचार करने से सामने आती है, वह यह कि कायनात और इनसानी ज़िन्दगी दोनों के अन्दर जारी उस .ख़ुदाई और फ़ितरी निज़ाम में जब भी इनसान ने कोई रुकावट डालने की कोशिश की और उसके सन्तुलन में बिगाड़ पैदा किया तो लाज़िमी तौर पर उसका रद्दे-अमल (प्रतिक्रिया) ज़ाहिर हुआ, जिसमें इनसान की सेहत, उसके संसाधनों और उसकी ज़िन्दगी के लिए नुक़सानात का सामान था। पर्यावरण प्रदूषण सिर्फ़ और सिर्फ़ इनसान का पैदा किया हुआ मसला (समस्या) है। फिर इस प्रदूषण के नतीजे में इनसानी समाज को आज कितने .ख़तरनाक क़िस्म की महामारियों का सामना करना पड़ रहा है। ज़िन्दगी के संसाधनों में कितने बड़े पैमाने पर नुक़सान पैदा हुआ है और इनसानी ज़िन्दगी, ज़मीनी और आसमानी न जाने कितनी आफ़तों में घिर गई है। ये फैली हुई चीज़ें अब जगज़ाहिर हैं। इनसानी सम्बन्धों का मैदान हो या इनसानों के हक़ और अधिकारों का मामला, .ख़ानदान के रिश्तों की बात हो या समाजी ज़िन्दगी के मेल-जोल की बात, खाने-पीने की चीज़ें हों या पहनने-ओढ़ने के सामान, घरेलू इस्तेमाल की चीज़ों का कारोबार हो या अनाजों और फलों की खेती-बाड़ी और तिजारत, इन सभी जगहों पर देखा जा सकता है कि क़ुदरत के निज़ाम में रुकावट आने और सन्तुलन के बिगड़ने की वजह से हर चीज़ में जैसे इनसानों, बल्कि दुनिया की सारी चीज़ों के लिए नुक़सान समा गया हो। फ़ायदा पहुँचने का पहलू घटने लगा है और नुक़सान का तनासुब (अनुपात) बढ़ता जा रहा है। यह सही है कि इनसान ने अपने सुख-चैन और आराम के बनावटी सामान जुटाने के मैदान में मानो क्रान्ति पैदा कर दी हैं, लेकिन इस हक़ीक़त से अब कौन इनकार कर सकता है कि कुल मिलाकर नुक़सानात फ़ायदों से कहीं .ज्यादा हैं। ऐसा कौन इनसान है जो बीमारियों से बचा हुआ और महफ़ूज़ है? जबकि पहले पूरे-पूरे समाज

में कभी-कभार कोई बीमार होता था। अब कितने लोग हैं जिनकी ज़िन्दगी में सच्ची .ख़ुशी, सुख और सुकून की लज़्ज़त मौजूद है? जबकि सच्ची बात यह है कि सुकून और सुख-चैन व .ख़ुशी ही इनसानी कोशिशों और मेहनतों का मक़सद था। आज सारे संसाधनों के होते हुए भी इनसान को सच्ची .ख़ुशी और दिली इत्मीनान व चैन की दौलत नसीब नहीं है।

यहाँ सोच-विचार करने का एक अहम नुक्ता (बिन्दु) यह है कि कायनात (संसार) के निज़ाम में जब भी कोई रुकावट पैदा हुई है और इनसानी ज़िन्दगी को जहाँ भी असन्तुलन के नुक़सान से दोचार होना पड़ा है तो वह लाज़िमन इनसान के किसी ग़लत क़दम उठाने का नतीजा रहा है। अपने-आप कभी भी क़ुदरत के निज़ाम और उसके सन्तुलन में फ़र्क़ नहीं पड़ा है। यह इनसान ही है, जिसने सन्तुलन को बिगाड़ा है और फ़साद के बीच बोए हैं।

सन्तुलन क्या चीज़ है?

सवाल यह है कि यह सन्तुलन क्या चीज़ है और इनसान के वे कौन से क़दम हैं जिनसे सन्तुलन बिगड़ता है और नुक़सान पैदा होते हैं? यह सवाल जितना अहम है इसका जवाब उतनी ही ज़्यादा आसान है। इस कायनात के बनानेवाले और इनसान के पैदा करनेवाले .ख़ुदा ने जब इन दोनों को वुजूद बख़्शा और इसको एक निज़ाम का पाबन्द बनाया तो उसने अपने इस निज़ाम की सूचना दोनों को दी और इस पर कारबन्द बने रहने का हुक्म जारी फ़रमाया। ज़रा देखिए क़ुरआन मजीद का कितना दिलकश अन्दाज़े-बयान है, सारे जहानों का पालनहार अल्लाह इस कायनात को किस तरह वुजूद में लाकर इसे इसके निज़ाम से आगाह करते हुए इसपर जारी रहने का हुक्म लागू कर रहा है। क़ुरआन की नीचे लिखी आयतें पढ़िए—

> "(ऐ नबी) इनसे कहो, क्या तुम उस .ख़ुदा का इनकार करते हो और दूसरों को उसका हमसर ठहराते हो, जिसमें ज़मीन को दो दिनों में बनाया? वही तो सारे जहानवालों का रब है। उसने ज़मीन को वुजूद में लाने के बाद ऊपर से पहाड़ उसपर जमा दिए और उसमें

बरकतें रख दीं और उसके अन्दर सब माँगनेवालों के लिए हर एक की चाहत और हाजत के मुताबिक़ ठीक अन्दाज़ से .ख़ुराक़ का सामान मुहैया कर दिया। ये सब काम चार दिनों में हो गए। फिर उसने आसमान की तरफ़ ध्यान दिया जो उस वक़्त महज़ धुवाँ था। उसने आसमान और ज़मीन से कहा, "वुजूद में आ जाओ, चाहे तुम चाहो या न चाहो" दोनों ने कहा, हम आ गए फ़रमाबरदारों की तरह।" तब उसने दो दिन के अन्दर सात आसमान बना दिए और हर आसमान में उसका क़ानून, वह्य (प्रकाशना) का दिया। और आसमाने-दुनिया को हमने चिराग़ों से (सजाया) और उसे .ख़ूब सुरक्षित कर दिया। यह सब एक ज़बरदस्त इल्म रखनेवाली हस्ती का मंसूबा है।"

(क़ुरआन, सूरा-41 हा-मीम-सजदा, आयतें-9 से 12)

ज़मीन और आसमान से जब अल्लाह ने ख़िताब फ़रमाया तो उन दोनों ने सिर झुका दिया (यानी आज्ञा का पालन किया) और इताअत का जुवा अपने सिर पर डाल लिया। वह पल है और रहती दुनिया तक यह कायनात अपने निज़ाम पर कारबन्द है। आसमानों की गर्दिश में अरबों बरस बाद भी मामूली-सा फ़र्क़ नहीं आया है। अल्लाह ने कायनात के साथ इनसान को भी उसके निज़ाम से आरास्ता किया है। और उसके लिए भी अहकाम (आदेश) जारी किए। इनसान के बारे में क़ुरआन की ये आयतें पढ़िए—

"अस्ल में इनसान को हमने मशक़्क़तों में पैदा किया है। क्या उसने यह समझ रखा है कि उसपर कोई क़ाबू न पा सकेगा? कहता है कि मैंने ढेरों माल उड़ा दिया। क्या वह समझता है कि किसी ने उसको नहीं देखा? क्या हमने उसको दो आँखें और एक ज़बान और दो होंठ नहीं दिए? और (नेकी-बदी) दोनों नुमायाँ रास्ते उसे (नहीं) दिखा दिए।" (क़ुरआन, सूरा-90 बलद, आयतें-4 से 10)

यह इनसान की अज़मत (महानता) का इज़हार था या उसकी आज़माइश का आग़ाज़ कि जब अल्लाह तआला ने इनसान को मुख़ातब बनाया तो उसके सामने दोनों रास्ते रख दिए, फिर ज़मीन और आसमान की तरह

इनसान से यह नहीं कहा कि "तुम चाहो या न चाहो" इस निज़ाम पर कारबन्द रहना है, बल्कि इनसान से यूँ फ़रमाया कि देखो तुम्हारे सामने यह सही रास्ता है और यह ग़लत रास्ता, तुम्हें फ़ुलाँ काम करने हैं और फ़ुलाँ काम नहीं करने हैं। यह इख़्तियार जो तन्हा इनसान को अता किया गया, उसकी अज़मत और सबसे अच्छी मख़लूक़ होने का इज़हार भी था। और इसमें उसके लिए आज़माइश भी कि अगर वह मना की गई बातों पर अमल करता है तो उसकी सज़ा भी भुगतनी होगी। इस छोटी-सी तफ़्सील से वाज़ेह हो जाता है कि अल्लाह के हुक्म और उसकी हिदायतों का नाम तवाज़ुन (सन्तुलन) है। और उन हुक्मों को तोड़ने से सन्तुलन बिगड़ता है और फ़साद पैदा होता है। कायनात तो ख़ुदा के हुक्मों की ताबेदारी में इख़्तियार से महरूम (वंचित) होकर लगी हुई है, तो उसके निज़ाम में कहीं कोई असन्तुलन ज़ाहिर नहीं होता और उसमें कोई नुक़सान पैदा नहीं होता। आसमान, सैयारे और अफ़लाक में कहीं किसी नुक़सान या बिगाड़ की निशानदही नहीं की जा सकी है। इनसान ने कायनात की विशालता और आसमानों के राज़ों (भेदों) के बारे में जो कुछ मालूमात हासिल की हैं उनमें क़ुदरत के निज़ाम के तवाज़ुन और सन्तुलन की कारफ़रमाई देखकर वह हैरान और चकित रह गया है, और ख़ुदातरस इनसान की ज़बान बेइख़्तियार पुकार उठी है कि "तू बड़ा ही बरकतवाला है अल्लाह सब कारीगरों से अच्छा कारीगर है।"

देखिए क़ुरआन मजीद क्या कह रहा है—

"तह-ब-तह सात आसमान बनाए। तुम रहमान की कारीगरी में किसी तरह की बेरबती नहीं पाओगे। फिर पलटकर देखो, कहीं भी तुम्हें कोई झोल नज़र आता है? बार-बार निगाह दौड़ाओ। तुम्हारी निगाह थक-हारकर नामुराद पलट आएगी।"

(क़ुरआन, सूरा-67 मुल्क, आयतें-3,4)

यक़ीनी तौर पर नहीं, कहीं कोई बेरबती और फ़र्क़ नहीं है। कायनात अपने निज़ाम के मुताबिक़ चल रही है। यही निज़ाम अल्लाह का हुक्म है, जिसकी ताबेदारी में वह लगी हुई है।

लेकिन इनसान का नतीजा क्या रहा? अल्लाह ने उसे सही और ग़लत दोनों रास्ते बताकर आज़ादी अता कर दी और बता दिया कि इन हुक्मों पर अमल करोगे तो तुम्हारे लिए ख़ुशियाँ, नेमतें और बहार-ही-बहार होगी। क़ुरआन मजीद में कहा गया है–

> "वह तुमपर आसमान से ख़ूब बारिशें बरसाएगा, तुम्हें माल और औलाद से नवाज़ेगा, तुम्हारे लिए बाग़ पैदा करेगा और तुम्हारे लिए नहरें जारी करेगा।" (क़ुरआन, सूरा-71 नूह, आयतें-11,12)

लेकिन अगर हुक्मों को छोड़कर मना किए गए कामों को किया और ग़लत रास्ते पर चल पड़े तो अंजाम तबाही, बरबादी और हलाकत होगा। अल्लाह के इन्हीं हुक्मों का नाम सन्तुलन है। इनसान ने जब तक अल्लाह के हुक्मों की ताबेदारी की, सन्तुलन बरक़रार रहा और उसकी नेमतों से वह फ़ैज़याब (लाभान्वित) होता रहा, लेकिन जब-जब और जहाँ-जहाँ उसने अल्लाह के हुक्मों को तोड़ा, उसकी तय की हुई हदों से आगे बढ़ा और उन सरहदों में दाखिल हुआ जहाँ दाखिले की सख़्त मनाही थी तो बिगाड़ पैदा हुआ और फ़साद ज़ाहिर हुए। बारिश के मौसम में बेतरतीबी, फिर इसकी वजह से कहीं सैलाब और कहीं अकाल पड़ा, ज़मीन के सीने में दफ़्न ख़ज़ानों का बे-सोचे-समझे इस्तेमाल, बल्कि फ़ुज़ूलख़र्ची और इसके नतीजे में भण्डार ख़त्म हो जाने का भयानक डर, फिर इसके लिए इनसानों में आपस में क़त्ल व ग़ारतगरी और लाखों करोड़ों इनसानों का ख़ून बहाकर कुछ इनसानों के ज़रिए से बचे हुए भण्डारों पर क़ब्ज़ा करने की कोशिश, क़ुदरती संसाधनों और भण्डारों का ऐशो-आराम के ऐसे साधनों के उद्योग-धन्धे और उत्पादन में इस्तेमाल, जिससे इनसानी ज़िन्दगी ख़तरनाक बीमारियों की लपेट में आ गई है। पानी के भण्डारों में ऐसे कचरों की मिलावट की पानी ज़िन्दगी का राज़ नहीं मौत का पैग़ाम बन गया है। माहौल और वातावरण में ऐसे ईंधन और गैसों का निकलना कि इनसान-तो-इनसान, उसकी खिदमत में लगी दूसरी जानदार मख़लूक़ें भी मौत की नींद सो रही हैं। फिर इसी पर बस नहीं, इनसानी रिश्तों और ताल्लुक़ात में ऐसी हैवानियत का इज़हार कि एड्स जैसे ख़तरनाक और लाइलाज मर्ज़ पूरे समाज को डकार जाने में तुला हुआ है।

यह सब इनसान ही के तो करतूत हैं, उसी के हदें फलाँगने ने इन नतीजों को पैदा किया है। यह सब कुछ जो हम देख रहे हैं सिवाय असन्तुलन और बेएतिदाली के और क्या हैं? और इसी असन्तुलन ने इनसान की ज़िन्दगी को जहन्नम बना दिया है। क़ुरआन मजीद ने इस मंज़र की तस्वीर इस तरह खीची है—

"ख़ुशकी और तरी (थल-जल) में फ़साद बरपा हो गया है लोगों के अपने ही हाथों की कमाई से। ताकि मज़ा चखाए उन (लोगों) को उनके कुछ कामों का, शायद कि वे बाज़ आएँ।"

(क़ुरआन, सूरा-30 रूम, आयत-41)

इनसान भी अगर आसमानों और कायनात की तरह अपने पैदा करनेवाले ख़ुदा के हुक्मों की पूरी-पूरी ताबेदारी करता होता तो बिलकुल ही बे-एतिदाली और असन्तुलन पैदा न होता और फिर जल-थल में यह फ़साद नज़र न आता।

तो यह बात मालूम हुई कि सन्तुलन को क़ायम रखना इनसानियत की कामयाबी के लिए लाज़िम है और ख़ुदा के हुक्म की ताबेदारी करना सन्तुलन है, फिर इसी सन्तुलन पर दुनिया और इनसान की ज़िन्दगी दोनों का निज़ाम क़ायम है, जब तक सन्तुलन क़ायम रहेगा यह निज़ाम अपनी बरकतें ज़ाहिर करता रहेगा। लेकिन जब सन्तुलन बिगड़ेगा तो बिगाड़ और फ़साद सामने आएगा।

दो किनारों के बीच

एतिदाल (बीच की राह) और सन्तुलन की जगह दो किनारों के बीच में है। एक किनारा इफ़रात (यानी इन्तिहाई दर्जे बढ़ा हुआ) और दूसरा तफ़रीत (यानी इन्तिहाई दर्जे गिरा हुआ)। एक ज़्यादती है और दूसरा कोताही। एक बेजा ख़र्च है, दूसरा कंजूसी। अल्लाह सिर्फ़ एतिदाल (बीच की राह) को पसन्द करता है। उसे न इफ़रात पसन्द है और न तफ़रीत। वह जिस तरह ज़्यादती करनेवालों को महबूब (प्रिय) नहीं रखता, उसी तरह कोताही करनेवाले भी उसको पसन्द और प्रिय नहीं है। क़ुरआन में अल्लाह ने अपने

बन्दों की कुछ ख़ूबियाँ और गुण बयान किए हैं, उन्हें अल्लाह ने 'इबादुर्रहमान' (रहमान के बन्दे) का इज़्ज़तवाला लक़ब दिया है, वे रहमान के बन्दे हैं उनकी एक ख़ूबी अल्लाह तआला इन अलफ़ाज़ में बयान फ़रमाता है—

"जो ख़र्च करते हैं तो न फ़ुज़ूलख़र्ची करते हैं न कंजूसी, बल्कि उनका ख़र्च दोनों इन्तिहाओं के बीच एतिदाल पर होता है।"

(क़ुरआन, सूरा-25 फ़ुरक़ान, आयत-67)

ज़िन्दगी के सारे मामलों की तरह ख़र्च के मैदान में भी एतिदाल अल्लाह को पसन्दीदा है। एक ओर बेजा ख़र्च है और दूसरी तरफ़ कोताही यानी कंजूसी है रहमान के बन्दे इन दोनों इन्तिहाओं के बीच एतिदाल की सीधी राह पर चलते रहते हैं। जब ही तो वे अल्लाह के महबूब होने का दर्जा पा लेते हैं।

बुख़्ल और कंजूसी निन्दा (मज़म्मत) के क़ाबिल है, लेकिन बेजा ख़र्च और फ़ुज़ूलख़र्ची इससे भी ज़्यादा निन्दनीय और हानिकारक है। इसलिए अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल०) ने बेजा ख़र्च और फ़ुज़ूलख़र्ची से रोका है। और फ़ज़ूलख़र्ची करनेवालों को शैतान का भाई क़रार दिया है। कहा गया—

"फ़ुज़ूलख़र्च लोग शैतान के भाई हैं और शैतान अपने रब का नाशुक्रा है।" (क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत-27)

जिस तरह ज़िन्दगी के दूसरे मामलों में बेएतिदाली बिगाड़ और फ़साद का सबब है, उसी तरह ख़र्च में बेएतिदाली बड़े नुक़सान और ख़तरों का दरवाज़ा खोलती है। बेज़ा ख़र्च और फ़ुज़ूलख़र्ची ख़र्च की बेएतिदाली का बदतरीन चेहरा है, जिसे अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल०) ने हरगिज़ पसन्द नहीं किया है और यह बेज़ा ख़र्च जिस मौक़े पर भी हो इस्लाम ने उसपर रोक लगाने का हुक्म दिया है।

शादी और बेजा ख़र्च

हमारी ज़िन्दगी में बहुत-से मौक़ों पर समारोहों पर बेजा ख़र्च और फ़ुज़ूलख़र्ची का दिखावा होता है। लेकिन सबसे ज़्यादा जहाँ बेजा ख़र्चों की नुमांइश होती है वह शादी-ब्याह का मौक़ा है। इस मौक़े को कोई भी हाथ

से जाने नहीं देता, बेज़रूरत .खर्च और नुमाइशी बेजा .खर्चों मानो शादी-ब्याह की पहचान बन गई है। अमीर-तो-अमीर कि वहाँ तो दौलत पानी की तरह बहाई जाती है, ग़रीब भी इस मौक़े पर बेजा .खर्च की नुमाइश से पीछे नहीं रहना चाहता। ज़मीन बिक जाए, घर गिरवी रखा जाए, सूद-ब्याज पर उधार पैसा लाना पड़े, यह सब कुछ गवारा है, लेकिन शादी में धूम-धाम न हो, फ़ुज़ूलख़र्ची का दिखावा न हो, अपनी झूठी शान के क़सीदे न पढ़े जाएँ तो वह शादी ही कैसी। फिर शादी के बाद तंगी आ घेरती है, क़र्ज़ देनेवाले जीना दूभर कर देते हैं, सूद का बोझ कमर तोड़ने लगता है, मुहताजी और इसपर क़र्ज़ की चिंता दिल को जकड़ लेती है, रोग लग जाता है, दिल के दौरे पड़ते हैं, कहीं अल्लाह की पनाह, .खुदकुशी (आत्महत्या) होती है और इज़्ज़त तो सरेबाज़ार नीलाम हो रही होती है, यह है हमारी फ़ुज़ूलख़र्ची का नतीजा। इस्लाम ने हरगिज़ ऐसी शादी को पसन्द नहीं किया है। मजबूरी और तंगी के बावजूद फ़ुज़ूलख़र्ची का रुझान अस्ल में दूसरों की नक़्क़ाली और अपनी झूठी शान के दिखावे का जज़्बा है। कभी ऐसा होता है कि यह मजबूरी भी होती है, जब इसके बग़ैर शादी का इन्तिज़ाम नहीं हो पा रहा हो। ऐसे मौक़े पर आमतौर पर और .खासकर समाज में एक ग़लत रिवाज की बुनियाद डालने और उसको बढ़ावा देने के नज़रिए से आमतौर पर इस नतीजे के लिए हमारे समाज के दौलतमन्दों का वह रवैया ज़िम्मेदार है जो शादी-ब्याह में फ़ुज़ूलख़र्ची का रिकार्ड बनाते हैं और यह भूल जाते हैं कि दौलत अल्लाह की दी हुई अमानत है, जिसपर .खुदा के सामने जवाबदेही करनी होगी।

आज हमारे समाज में बेजा .खर्च और फ़ुज़ूलख़र्ची की कौन-कौन-सी शक्लें रिवाज पा रही हैं और उनके क्या-क्या नुक़सान .खुद हमारे ही समाज को उठाने पड़ रहे हैं। फिर धूमधाम की एक शादी के नतीजे में कितने ही घरों की बेटियाँ बिन ब्याही रहने पर मजबूर हो जाती हैं, इनपर कुछ रौशनी डालने से पहले आइए हम देखें कि इस्लाम ने कैसी शादी पसन्द की है और शादी के लिए उसने किन बातों पर अमल करने पर उभारा है।

मिसाली शादी

सबसे अच्छी-मिसाली शादी हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) की है। आप (सल्ल॰) ने ख़ुद भी शादी की, बेवा से भी और कुँवारी से भी और अपनी बेटियों की भी शादियाँ कीं, फिर आप (सल्ल॰) ने अपने सहाबा (रज़ि॰) को भी शादी की तरग़ीब दी और इसके तरीक़े बताए। नबी (सल्ल॰) के मुबारक अमल और आप (सल्ल॰) की हिदायतों को पढ़ने से वाज़ेह होता है कि शादी एक समाजी ज़रूरत है और साथ ही एक इबादत भी। इसी लिए आप (सल्ल॰) ने शादी करने के लिए उभारा और बिन ब्याहे आदमी को शैतान का भाई बताया। और शादी को अपनी सुन्नत क़रार दिया। लेकिन कहीं से भी यह ज़ाहिर नहीं होता कि शादी दौलत की नुमाइश और बेजा ख़र्चों की कोई तक़रीब (समारोह) समझी गई हो। क़ुरआन और हदीसों की तमाम हिदायतों का ख़ुलासा यह है—

पहली यह कि जब भी शादी की उम्र हो जाए और मुनासिब जोड़ा मिल जाए तो शादी में देर नहीं करनी चाहिए। बग़ैर शादी के ज़िन्दगी बिगाड़-फ़साद का दरवाज़ा खोलती है, इसलिए ऐसी ज़िन्दगी को इस्लाम ने पसन्द नहीं किया है। उसका हुक्म है कि हर उस शख़्स की शादी कर दी जाए जिसकी शादी न हुई हो और इस काम की ज़िम्मेदारी वह आदमी भी महसूस करे जो ग़ैर-शादीशुदा है। चाहे वह कुँवारा हो या शादी के बाद किसी वजह से बीवी से महरूम (वंचित) हो, और समाज भी इसकी ज़िम्मेदारी ले कि उसका कोई एक आदमी भी बग़ैर शादी के न रहे।

दूसरे यह कि शादी के लिए ऊँची तालीम, मेयारी नौकरी (सरकारी), बेहतरीन स्तर का रहन-सहन और सहूलतों की फ़रावानी लाज़िम नहीं है, ये चीज़ें इनसान की चाहत हो सकती हैं, लेकिन ज़रूरत नहीं। शादी को इन चीज़ों पर रोके रखने का रुझान न तो ठीक और सही है और न इस्लाम में पसन्दीदा। शादी तो एक समाजी ज़रूरत और एक तरह की इबादत है, इसके लिए सिर्फ़ इतना काफ़ी है कि इनसान सेहतमन्द और मुनासिब तरीक़े से ख़र्चे पूरे करने की सलाहियत रखता हो, बल्कि क़ुरआन मजीद ने तो यहाँ तक कह दिया है कि शादी करने के बाद अगर उन्हें तंगदस्ती का डर हो तो

अल्लाह अपने फ़ज़्ल से उन्हें मालदार कर देगा। क़ुरआन की यह आयत पढ़िए–

"तुममें से जो लोग बिन-ब्याहे हों और तुम्हारे लौंडी-ग़ुलामों में से जो नेक हों उससे उनकी शादी कर दो। अगर वे ग़रीब हों तो अल्लाह अपने फ़ज़्ल से उनको मालदार कर देगा।"

(क़ुरआन, सूरा-24 नूर, आयत-32)

तीसरी यह कि अगर किसी वजह से शादी का इन्तिज़ाम नहीं हो पाता है, मियाँ-बीवी के ख़र्चे पूरे करने की भी क़ुदरत से भी कोई आदमी महरूम है तो उसको उस वक़्त तक पाकदामनी अपनाने की तरग़ीब दी गई है, जब तक कि महर और खाना-ख़र्चे का इन्तिज़ाम न हो जाए, और पाक दामन रहने के लिए रोज़े से मदद हासिल करने की राह दिखाई गई है। क़ुरआन मजीद में इस बारे में यह आयत है–

"और जो लोग शादी करने का मौक़ा न पाएँ उन्हें चाहिए कि पाकदामनी अपनाएँ, यहाँ तक कि अल्लाह अपने फ़ज़्ल से उनको मालदार कर दे।" (क़ुरआन, सूरा-24 नूर, आयत-33)

और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया–

"ऐ नौजवानो! तुममें से जो शादी की क़ुदरत रखता है वह शादी कर ले। यह निगाह को नीची रखती है और शर्मगाह की हिफ़ाज़त करती है। और जो शादी की क़ुदरत नहीं रखता वह रोज़ा रखे, रोज़ा उसकी शहवत (काम वासना) के ज़ोर को तोड़नेवाला है।"

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

चौथी यह कि शादी को नुमायाँ तौर पर और एलान के साथ अंजाम देने की हिदायत दी गई है। अल्लाह के नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया–

"इस शादी का एलान करो और इसे मस्जिद में अंजाम दो।"

(हदीस : तिरमिज़ी)

मस्जिद में शादी की तक़रीब अंजाम देने का मक़सद भी अस्ल में शादी का एलान ही है क्योंकि इलाक़े और मुहल्ले के हर ख़ास व आम को मालूम

हो जाए कि फ़ुलाँ का लड़का और फ़ुलाँ की लड़की अब आपस में मियाँ-बीवी हो गए हैं। यह एलान बदकारी और ज़िना (व्यभिचार) के रास्ते को बन्द करता है और किसी पाकदामन लड़के या लड़की पर शक और तोहमत के इमकान को ख़त्म करता है। इसीलिए शादी और ज़िना में एलान ही को फ़र्क़ बताया गया है। (हदीस : तिरमिज़ी, नसाई) शादी के वक़्त लोगों की मौजूदगी और इसको यक़ीनी बनाने के लिए गवाहों की शर्त शादी को ज़िनाकारी से बिलकुल ही अलग कर देती है, वरना बहुत मुमकिन था कि रज़ामन्दी से ज़िना करनेवाले दावा कर बैठें कि हमने शादी करके ऐसा किया है।

पाँचवें यह कि शादी की तक़रीब और शादी के मौक़े को ख़ुशी और शादमानी का मौक़ा समझा गया और इस मौक़े पर ख़ुशी व मुसर्रत के इज़हार को न सिर्फ़ ग़लत नहीं बताया गया, बल्कि इसकी तरग़ीब दी गई। शादी क्यों न ख़ुशी का मौक़ा हो, यह दुनिया की बड़ी नेमत और ख़ुशी का ज़रिआ है और बेइन्तिहा मसालेह और फ़ायदों की बुनियाद है, बल्कि सही और सच्ची बात तो यह है कि इनसान शादी के बग़ैर अधूरा है। अल्लाह ने इनसान की पैदाइश ही इस तरह की है कि मर्द और औरत दोनों एक-दूसरे से मिलकर मुकम्मल होते हैं। दोनों अपनी जगह आधे हैं तभी तो क़ुरआन ने इन दोनों को एक-दूसरे का हिस्सा क़रार दिया है। क़ुरआन में है–

"तुम सब (मर्द-औरत) एक ही गरोह के लोग हो।"

(सूरा-4 निसा, आयत-25)

अल्लाह के नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया–

"औरतें मर्दों का हिस्सा है।"

इतना ही नहीं, बल्कि दोनों के ईमान की तकमील (पूर्णता) भी निकाह और शादी के बाद ही होती है। नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया–

"जब कोई आदमी शादी कर लेता है तो वह आधे दीन की तकमील कर लेता है, अब बाक़ी आधे दीन के बारे में अल्लाह का डर रखे।"

(हदीस : बैहक़ी)

ऐसी ख़ुशी और शादमानी के मौक़े पर शादमानी के मुहज़्ज़ब (सभ्य) इज़हार की न सिर्फ़ इजाज़त, बल्कि तरग़ीब दी गई है। एक मौक़े पर नबी (सल्ल॰) ने हज़रत आइशा (रज़ि॰) से फ़रमाया कि तुमने शादी के मौक़े पर क्यों न किसी ऐसे आदमी का इन्तिज़ाम कर दिया जो शादी में यूँ गाता। फिर आप (सल्ल॰) ने शेर के दो बन्द पढ़े, सहाबिया हज़रत रबीअ बिन्ते-मुअव्विज़-बिन-अफ़रा का बयान है कि मेरी शादी की सुबह को नबी (सल्ल॰) मेरे घर तशरीफ़ लाए। वहाँ बच्चियाँ दफ़ बजा-बजाकर गा रही थीं उनके एक जुमले पर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने टोकते हुए फ़रमाया कि इस जुमले को यूँ कहो। इसी तरह एक और शादी के मौक़े पर बच्चियाँ गा रही थीं। वहाँ बद्र की लड़ाई में शरीक रहनेवाले दो सहाबा (रज़ि॰) मौजूद थे, किसी के पूछने पर उन्होंने जवाब दिया कि–

"शादी के मौक़े पर हमें खेल-तमाशा की इजाज़त दी गई है।"
(हदीस : नसाई)

छठी बात यह कि शादी के बाद वलीमा (दावत) करने को सुन्नत का तरीक़ा क़रार दिया गया। अल्लाह के नबी (सल्ल॰) ने शादी के बाद वलीमा किया और इसकी तरग़ीब दी। आप (सल्ल॰) ने हज़रत अब्दुर्रहमान-बिन-औफ़ (रज़ि॰) की शादी की ख़बर सुनी तो फ़रमाया–

"अल्लाह तुम्हें बरकत दे, वलीमा करो चाहे एक बकरी ही के ज़रिए से हो।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

आप (सल्ल॰) ने वलीमा की दावत क़बूल करने की भी तरग़ीब दी, हाँ साथ ही यह भी हिदायत की कि वलीमे की दावत में मालदारों के साथ ग़रीबों को भी दावत दी जाए। आप (सल्ल॰) ने वलीमे की ऐसी दावत को सबसे बुरी दावत क़रार दिया है जिसमें अमीरों को तो बुलाया जाए लेकिन ग़रीबों को न बुलाया जाए।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

शादी के सिलसिले में ऊपर बयान की गई इन हिदायतों में कहीं पर यह बात नज़र नहीं आती कि शादी के मौक़े पर ख़ूब धूमधाम और दौलत का दिखावा और नुमाइश का एहतिमाम किया गया हो, ख़ुद नबी (सल्ल॰) ने

अपनी या अपनी किसी बेटी की शादी में क़ुदरत रखने के बावजूद ऐसा नहीं किया और न सहाबा (रज़ि॰) में जो बहुत ज़्यादा दौलतमन्द और मालदार थे उन्होंने भी किसी ऐसे अमल का मुज़ाहरा नहीं किया। हज़रत अब्दुर्रहमान-बिन-औफ़ (रज़ि॰) भी बहुत ही मालदार अमीर सहाबा में से थे, लेकिन उनकी शादी की ख़बर भी अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को तब हुई जब आप (सल्ल॰) ने उनके हाथ पर पीले रंग का असर देखा और मालूम किया तो उन्होंने बताया। इसलिए शादी के मौक़े पर हमारे समाज में जितनी तरह की फ़ुज़ूलख़र्चियों की नुमाइश घुस आई है, उनमें से किसी बात का ताल्लुक़ शादी के साथ नहीं है। शादी बहुत ही सादगी से अंजाम पाई जा सकती है और ऐसी ही शादी बरकतवाली होती है, अल्लाह के नबी (सल्ल॰) ने एलान फ़रमाया है कि सबसे ज़्यादा बरकतवाली शादी वह है, जिसमें सबसे कम ख़र्च हो, आप (सल्ल॰) ने कहा—

"सबसे बाबरकत शादी वह है जो सबसे कम ख़र्च में हो।"

(हदीस : बैहक़ी)

आइए हम ज़रा जाइज़ा लें कि हमने अपनी शादियों में कहाँ-कहाँ फ़ुज़ूलख़र्चियों को दाख़िल कर लिया है? और वह किस तरह हमारे समाज को नुक़सान पहुँचा रही हैं? फिर इस सिलसिले में इस्लाम की हिदायतें क्या हैं?

फ़ुज़ूलख़र्चियाँ

हमारी शादियों में कई तरह की फ़ुज़ूलख़र्चियाँ होती हैं, जो बाद में न सिर्फ़ हमारी परेशानियों में इज़ाफ़ा करती है, बल्कि कभी ऐसा होता है कि अल्लाह और उसके नबी (सल्ल॰) की नाराज़गी और आख़िरत में तबाही का सामान भी करती हैं। फ़ज़ूलख़र्ची और बेजा ख़र्च की एक नुमाइश उन लिबासों और सामानों की शक्ल में की जाती है, जो विभिन्न नामों और भिन्न-भिन्न रस्मों के तहत लड़के और लड़कीवाले एक-दूसरे के घर भेजते हैं, इसका सिलसिला शादी के काफ़ी पहले शुरू हो जाता है और शादी के मौक़े पर तो यह नुमाइश और दिखावा बुलन्दी पर होता है। इस मौक़े पर दहेज

के नाम पर पूरा नया घर बसाया जाता है, वहाँ भी जहाँ ज़रूरत नहीं होती है और वहाँ भी जहाँ इसकी बाज़ाब्ता माँग की जाती है। कुछ जगहों पर तो पचास-पचास जोड़े कपड़े भेजे जाते हैं और ऐसे-ऐसे सामान मुहैया किए जाते हैं जिनके इस्तेमाल की शायद कम ही ज़रूरत पेश आए। तोहफ़े देना ज़रूर अच्छी बात है, लेकिन एक तो शादी में रस्म बनाकर क़ीमती चीज़ों की फ़राहमी को लाज़िम बनाना, फिर रस्म के हाथों मजबूर होकर जैसे और जहाँ से बन पड़े, इन सामानों का इन्तिज़ाम करना, फिर बहुत-सी जगहों पर इन सामानों की माँग करना, ये बातें तोहफ़े की नहीं रस्म की पाबन्दी और फ़ुज़ूलख़र्ची की हो जाती है।

दहेज के सामान के सिलसिले में यह ग़लतफ़हमी हमारे पढ़े-लिखे लोगों में भी पाई जाती है कि ख़ुद अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने अपनी चहेती बेटी हज़रत फ़ातिमा (रज़ि॰) को दहेज का सामान दिया था, इस सिलसिले में वाज़ेह रहना चाहिए कि नबी (सल्ल॰) की चार प्यारी बेटियाँ थीं। आप (सल्ल॰) ने दूसरी तीन बेटियों को तो दहेज नहीं दिया था, इसी तरह आप (सल्ल॰) के जाँनिसार सहाबा (रज़ि॰) ने भी आज की तरह दहेज़ के सामानों का लेन-देन नहीं किया था। हज़रत फ़ातिमा (रज़ि॰) का मामला यह था कि पहले तो आप (सल्ल॰) ने उन्हें सिर्फ़ वह सामान (हज़रत अली रज़ि॰ की ज़िरह बिकवाकर उस पैसे से इन्तिज़ाम किया) दिए जिनकी उन्हें सख़्त ज़रूरत थी। दूसरे ये सामान भी इसलिए दिए गए कि आप (सल्ल॰) के दामाद हज़रत अली (रज़ि॰) आप (सल्ल॰) के चचाज़ाद भाई होने के अलावा ख़ुद आप (सल्ल॰) ही की सरपरस्ती में थे। उनका अलग घर न था, न वह मदीना में अपने माँ-बाप के घर थे। वह नबी (सल्ल॰) के ही साथ रहते थे, जब आप (सल्ल॰) ने उनकी शादी अपनी बेटी हज़रत फ़ातिमा (रज़ि॰) से कर दी तो उन दोनों को एक अलग घर में बसाया और बहुत ही ज़रूरत के कुछ सामान उन्हें दिए ताकि वे नए घर में खाने-पीने और सोने का नज़्म कर सकें। क्या यह वही दहेज था जिसका दिखावा आज हमारी शादियों में धड़ल्ले से हो रहा है? हरगिज़ नहीं। वह न रस्म थी और न नुमाइश, बल्कि एक ज़रूरत की तकमील (पूर्ति) थी।

बेजा .खर्च की दूसरी शक्ल शादी की तक़रीब का मौक़ा होता है। अब यह बात अचम्भे की नहीं रही कि शादी-हाल की तैयारी और उसकी सजावट पर लाखों-लाखों रुपए .खर्च किए जाते हैं, बनाने-सँवारने और सजाने में एक-दूसरे पर बाज़ी ले जाने की कोशिश होती है और एक रात की सजावट और शोभा में इतना रुपया लुटा दिया जाता है, जिसमें सैकड़ों बच्चियों की शादियों का इन्तिज़ाम हो जाए। इसी शादी के मौक़े पर निकाह की तक़रीब में और वलीमे की दावत में इतनी बड़ी तादाद में लोगों को बुलाया जाता है कि भीड़ की शक्ल बन जाती है। फिर खाने-पीने की तरह-तरह की क़िस्मों में ऐसा नयापन दिखाया जाता है कि इनसान खाए कम और देखे ज़्यादा, इसी लिए आमतौर पर बहुत से खानों की बरबादी होती है।

बेजा .खर्च का ताल्लुक़ महर से भी है। महर मुक़र्रर करना निकाह (शादी) का एक लाज़मी हिस्सा है, इसके बग़ैर शादी मुकम्मल नहीं होती है। इस्लामी शरीअत ने महर अदा करने की ज़िम्मेदारी मर्द पर रखी है और इसकी मिक़दार निश्चित करने में दोनों की माली हैसियत का लिहाज़ रखने की हिदायत दी है। महर की रक़म अस्ल में औरत का हक़ है जो उसे शादी के मौक़े पर मिल जाना चाहिए। शादी के बाद जब तक महर की रक़म अदा नहीं होती है वह शौहर पर बीवी का क़र्ज़ बना रहता है। शरीअत चाहती है कि बीवी को महर की रक़म जितनी जल्द मुमकिन हो मिल जाए, इसलिए उसकी हिदायत है कि महर में उतनी रक़म मुक़र्रर की जाए जो आसानी के साथ शौहर अदा कर दे, हाँ इतनी कम भी न हो कि उसकी कोई .खास हैसियत न बन सके। इस सिलसिले में औरत के .खानदान की दूसरी औरतों के महर की रक़म को नमूना बनाया जाना चाहिए, लेकिन कभी-कभार दिखावे की .खातिर महर की रक़म बहुत बड़ी मिक़दार में मुक़र्रर कर दी जाती है, फिर कभी ऐसा होता है कि लड़कीवाले महर की ग़ैर-मामूली मिक़दार रखने की माँग करते हैं, यह रुझान भी बेजा .खर्च की तरफ़ इशारा करता है। महर की रक़म के सिलसिले में सन्तुलित नज़रिया अपनाना चाहिए, ज़्यादा रक़म बाँधने का एक नुक़सान यह भी होता है कि आमतौर पर उसकी अदाएगी में टाल-मटोल की जाती है और मतभेद की सूरत में मामला कोर्ट तक पहुँचता है।

बेज़ा ख़र्च और फ़ुज़ूलख़र्ची की ये कुछ नुमायाँ शक्लें हैं, जो हमारी शादियों में आज देखी जा रही है। इस्लाम ने बेजा ख़र्च और फ़ुज़ूलखर्ची से मना किया है। उसने बताया है कि माल अल्लाह की नेमत और उसकी अमानत है, वह याद दिलाता है कि माल का अस्ल मालिक अल्लाह तआला है, उसने अपना माल इनसान को अमानत के तौर पर दिया है कि वह उसके बताए हुए रास्तों में उसे ख़र्च करे, माल को अल्लाह ने ज़िन्दगी की पूँजी और लोगों के लिए क़ियाम का ज़रिआ बनाया है। इतनी अहमियत रखनेवाले माल को यूँ ही बरबाद करना अल्लाह की दौलत को बरबाद करना है, जिसपर अल्लाह के यहाँ जवाबदेही करनी होगी। बेजा ख़र्च माल को ज़रूरत से ज़्यादा ख़र्च करना है, यह ज़ाइद माल अल्लाह ने इसलिए दिया था कि उसके मुहताज बन्दों की ज़रूरत में काम आए, लेकिन ऐसा न करके उसे बरबाद कर दिया गया या ऐसा बना दिया गया कि उसकी फ़ायदा देने की सलाहियत जाती रहे। यह उसकी अमानत में ख़ियानत का काम करना है, जो इनसानियत के हक़ में भी जुर्म है और अल्लाह के नज़दीक भी नापसन्दीदा। बेज़ा ख़र्च की ये शक्लें हमारे समाज में नासूर (कैंसर) बनकर फैल रही हैं और अनगिनत घरों को कंगाल और बरबाद कर रही हैं।

बेजा ख़र्च की निन्दा

बेजा ख़र्च और फ़ुज़ूलख़र्ची के नुक़सान विभिन्न पहलुओं से पैदा होते और सामने आते हैं। सबसे पहले खुद उस आदमी के लिए यह दुख और अफ़सोस का कारण बनता है, जिसने फ़ुज़ूलख़र्ची की है। दौलत नापाएदार और चलायमान चीज़ है फिर बेजा ख़र्च हो तो और ज़्यादा बेबरकती पैदा हो जाती है। ऐसी दौलत जब लुट जाती है और हालात आसानी व सहूलत के बजाए मुश्किल और तंगी में बदलने लगते हैं तब अपने किए पर पछतावा होता है, लेकिन उस वक़्त अफ़सोस के सिवा कुछ हाथ नहीं आता, और भरपाई का मौक़ा निकल चुका होता है। दूसरा नुक़सान यह होता है कि एक आदमी का बेजा ख़र्च समाज के दूसरे लोगों के लिए मुश्किलें पैदा कर देता है। शादी-ब्याह ही को लीजिए किसी इलाक़े या मुहल्ले की एक शादी में जब धूमधाम या दिखावा किया जाता है, और बेजा ख़र्च और फ़ुज़ूलख़र्ची की

जाती है तो उस मुहल्ले के दूसरे लोगों के लिए सादगी के साथ शादी करना मुश्किल बनने लगता है, क्योंकि एक-दूसरे की देखा-देखी वैसी ही धूमधाम की शादी की माँगें होने लगती हैं। फिर धीरे-धीरे वह समाज में इतना जड़ पकड़ने लग जाता है कि उसकी हैसियत शादी की एक रस्म की हो जाती है, उस वक़्त समाज के कमज़ोर और ग़रीब लोगों के लिए शादी की उन बेजा रस्मों और बेजा ख़र्च पर आधारित रिवाज की पाबन्दी नागवार चीज़ बन जाती है। ख़र्च के डर से वे शादी के इन्तिज़ाम नहीं कर पाते, लड़केवालों की माँगों को पूरा करने की ताक़त और हैसियत नहीं रखते, नतीजा यह होता है कि उनकी बेटियाँ घरों में बैठी रह जाती हैं। ऐसे माँ-बाप जीते जी मरने लगते हैं, और अगर सही तरबियत और सही माहौल न हो तो जिंसी आवारागर्दी के दरवाज़े खुलने लगते हैं। इस तरह देखा जा सकता है कि एक आदमी का बेजा ख़र्च दूसरे कितने ही लोगों की तबाही का सामान बन जाता है।

तीसरा सबसे बड़ा नुक़सान रूहानी और आख़िरत का होता है। बेजा ख़र्च अल्लाह को नापसन्दीदा है, फिर फ़ुज़ूलख़र्ची करनेवालों को अल्लाह तआला ने शैतान का भाई क़रार दिया है, ज़ाहिर है कि शैतान अल्लाह के दरबार का धुतकारा हुआ है, तो फ़ुज़ूलख़र्ची करनेवाले अल्लाह की नज़र में किस हैसियत के हक़दार क़रार पाएँगे। क़ुरआन में अल्लाह तआला ने अनेकों जगहों पर बेजा ख़र्च से और फ़ुज़ूलख़र्ची करने से रोका है। यहाँ यह वाज़ेह रहे कि बेजा ख़र्च पहला ज़ीना है और फ़ुज़ूलख़र्ची दूसरा ज़ीना। बेजा ख़र्च का मतलब है ज़रूरत से ज़्यादा ख़र्च करना, यानी जहाँ सौ या दो सौ रुपए ख़र्च करने की ज़रूरत है और उससे काम पूरा हो जाता है वहाँ सौ की जगह डेढ़ सौ या दो सौ रुपए ख़र्च किए जाएँ, यह है बेजा ख़र्च। फ़ुज़ूलख़र्ची का मतलब है बेज़रूरत ख़र्च करना, यानी ऐसी जगहों पर ख़र्च किया जाए जहाँ ख़र्च करने की ज़रूरत ही नहीं है। फ़ुज़ूलख़र्ची को क़ुरआन और हदीस में 'तबज़ीर' का नाम दिया गया है। क़ुरआन ने हर काम में यहाँ तक कि खाने-पीने में भी बेजा ख़र्च से बचने की हिदायत दी है। ज़रूरत से ज़ाइद कोई भी क़दम उठाना हानिकारक होता है। अल्लाह का फ़रमान है—

"खाओ और पियो लेकिन हद से आगे न बढ़ो। बेशक अल्लाह हद से आगे बढ़नेवालों को पसन्द नहीं करता।"

(क़ुरआन, सूरा-7 आराफ़, आयत-31)

और फ़ुज़ूलख़र्च करनेवालों के बारे में फ़रमाया–

"फ़ुज़ूलख़र्च लोग शैतान के भाई हैं और शैतान अपने रब का नाशुक्रा है।" (क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत-27)

अल्लाह को यह बात पसन्द है कि इनसान अपने हर काम में सन्तुलन और एतिदाल अपनाए और अल्लाह को मुक़र्रर की हुई हदों से आगे न बढ़े, क़ुरआन ने बार-बार ताकीद की है कि "सन्तुलन की हद से आगे न बढ़ो, क्योंकि "ख़ुदा हद से आगे बढ़नेवालों को पसन्द नहीं करता है।" और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया–

"बीच की राह अपनाओ, बीच की राह अपनाओ, मंज़िल तक पहुँच जाओगे।"

फ़ुज़ूलख़र्ची से बचिए

पीछे तफ़्सील से आई बातों से यह बात वाज़ेह हो जाती है कि बेजा ख़र्च और फ़ुज़ूलख़र्ची न दुनिया में भली है और न ही आख़िरत के लिए इत्मीनान का सबब, इससे दोनों बिगड़ते हैं, इसका नुक़सान बेजा ख़र्च करनेवालों के ख़ुद तक महदूद नहीं रहता बल्कि धीरे-धीरे पूरे समाज को अपने लपेट में ले लेता है। इसलिए आइए अहद (प्रतिज्ञा) करें कि हम ख़ुद बेजा ख़र्च से बचेंगे और समाज को इस लानत से नजात दिलाएँगे। लेकिन यह कैसे होगा?

इसके लिए पहली ज़रूरत यह है कि हम ख़ुद सबसे पहले इस्लाम की हिदायतों और शिक्षाओं की जानकारी हासिल करें। शादी-ब्याह के सिलसिले में क़ुरआन और हदीस में बताई गई बातों को मालूम करें ताकि हमें सही अन्दाज़ा हो सके कि बेजा ख़र्च कैसे ग़लत चीज़ है औ फ़ुज़ूलख़र्ची करके हम कितनी बड़ी तबाही मोल ले रहे हैं।

दूसरी ज़रूरत यह है कि अपने मुहल्ले, इलाक़े, बिरादरी और अपने

असरवाले हल्क़ों में इस्लाम की उन हिदायतों को आम करें, बेजा ख़र्च के नुक़सान से उन्हें आगाह और ख़बरदार करें, असरवाले और बड़े लोगों के विचारों की दुरुस्तगी करके एक मज़बूत मौक़िफ़ बनाने की राह-हमवार करें, इस तरह बेदारी की आम लहर पैदा कर दें ताकि हर जगह बेजा ख़र्च और फ़ुज़ूलख़र्ची के ख़िलाफ़ ज़ेहन तैयार हो जाए।

फ़ुज़ूलख़र्च और फ़ुज़ूलख़र्ची से पाक शादी का माहौल बनाने के लिए यह बात भी मुनासिब होगी कि जहाँ धूमधाम और बेजा ख़र्चों के साथ शादी हो उसका हौसला तोड़ा जाए, उसे अच्छी नज़र से न देखा जाए, जब सादगी के साथ शादी करने की मिसालें क़ायम होंगी, समाज का दबाव बड़ा ही असरदार होता है, जब मुहल्ले और इलाक़े के इज़्ज़तदार और असरदार लोग ऐसी शादी को नापसन्दीदगी की नज़र से देखेंगे, अपने असरवाले हल्क़े में इसपर नापसन्दीदगी का इज़हार करेंगे और सादगी की शादी में सहयोग करेंगे तो बहुत ही ख़ुशगवार माहौल बनने लगेगा।

सामूहिक शादी

बेजा ख़र्च और फ़ुज़ूलख़र्ची की हौसला शिकनी और आसान शादी के रिवाज (चलन) के लिए इस तरह के क़दम उठना बहुत ही बेहतर हो सकता है कि इलाक़े की किसी संस्था या तंज़ीम (संगठन) की तरफ़ से या समाज के असरदार लोग आपस में मिलकर सामूहिक शादी के समारोह (तक़रीब) का आयोजन करें। अब ऐसी शादियों का रिवाज चल भी पड़ा है, इसे बेहतर अन्दाज़ से मुनज़्ज़म (संगठित) करने की ज़रूरत है। दीन के आलिमों के मशवरों के साथ सामूहिक शादियों का प्रोग्राम तरतीब दिया जाए, जहाँ शरीअत के आदाब और पर्दे की पाबन्दियों का ख़याल करते हुए इस तरह सामूहिक शादी अंजाम पाएँ कि इन्तिहाई कम ख़र्च में उम्दगी के साथ शादी की तक़रीब मुकम्मल हो जाए। हर मुहल्ले और इलाक़े में नौजवान लड़के और लड़कियाँ शादी की उम्र में मौजूद होते हैं, उनके माँ-बाप और सरपरस्तों से बातचीत की जाए, ख़ुद उन नौजवानों की भी ज़ेहन-साज़ी की जाए और सामूहिक तक़रीब के लिए तैयार किया जाए, उन सबकी आमादगी के बाद

जब सामूहिक शादी का आयोजन होगा तो पूरे मुहल्ले और इलाक़े को अनेकों लड़कियों और लड़कों की शादियाँ इस क़द्र आसानी के साथ अंजाम पा जाएँगी और हर घरवाले पर ख़र्च का भार भी इतना कम आएगा कि वे सब ख़ुशी महसूस करेंगे और पूरे मुहल्ले के रहनेवाले लोग राहत व चैन महसूस करेंगे। कितने ही बिगाड़ और फ़सादों का दरवाज़ा बन्द होगा और मुहल्ले में अल्लाह की बरकतें नाज़िल होंगी।

ऐसी सामूहिक तक़रीब (समारोह) के आयोजन करने के लिए अगर पहले से बातचीत का माहौल बनाया जाए और बातचीत चलती रहे तो इस नज़्म (प्रबन्ध) को और अधिक आसान बनाया जा सकता है। इसकी एक शक्ल यह भी हो सकती है कि मुहल्ले या इलाक़े में इस नाम से फंड क़ायम कर दिया जाए, जिसमें ख़ुद मुहल्ले के लोग अपनी हैसियत के मुताबिक़ रक़म जमा करते रहें, भलाई चाहनेवाले इसमें अपनी ताक़त और हैसियत के मुताबिक़ ज़्यादा हिस्सा ले सकते हैं, फिर शादी के मौक़े पर इस फंड की कुल रक़म से दो तरह के काम लिए जा सकते हैं, एक तो इस तरह कि सामूहिक नज़्म (प्रबन्ध) पर आनेवाले ख़र्चे पहले इस फंड से पूरे कर लिए जाएँ, बाक़ी दूसरे ख़र्चों को तक़रीब (समारोह) में शरीक लोगों पर तक़सीम (बाँट) कर दिया जाए। दूसरी शक्ल सबके आपसी मशवरे से यह भी अपनाई जा सकती है कि इस फंड की रक़म सिर्फ़ इन्तिहाई ग़रीब बच्चियों और बच्चों की शादी या उनके हिस्से पर ख़र्च की जाए, इस तरीक़े के ज़रिए ग़रीबों की शादियों का एक संगीन मसला मुहल्ले की सतह पर हल होने लगेगा।

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को लोगों का इस तरह का जमा होना बेइन्तिहा पसन्द था, जहाँ सारे शामिल होनेवाले अपने-अपने हिस्से की थोड़ी-थोड़ी मिक़दार (मात्रा) मिलाकर कुछ रक़म जमा कर लें और सब मिलकर उस रक़म से अपनी ज़रूरतें पूरी कर लें। नबी (सल्ल॰) सफ़र में खाने का भी इसी तरह प्रबन्ध किया करते थे। आइए हम सब इरादा करें कि शादी के इस अहम मसले के लिए जो आज हमारे समाज में इन्तिहाई संगीन मसला बना हुआ है नबी (सल्ल॰) के नमूने और तरीक़े की रौशनी हासिल करते हुए सामूहिक नज़्म क़ायम करेंगे, और अपने इलाक़े और मुहल्ले की

सतह पर इस सिलसिले में क़दम आगे बढ़ाएँगे ताकि हमारा क़दम बढ़ाना न सिर्फ़ हमारे इलाक़े के लिए इस्लामी आदाब की रौशनी में मसले का हल बने, बल्कि यह दूसरों के लिए भी एक निशाने-राह और अमल का नमूना भी बने। आइए हम फ़ैसला करें कि हम फ़ुज़ूलख़र्ची से पाक कम ख़र्च शादी का इस्लामी नमूना बरपा करने के लिए ख़ुद भी ऐसी शादी करेंगे और अपने भाइयों और बहनों के लिए भी ऐसी ही शादियों की राह हमवार और आसान करेंगे।

❖❖